International Journal of Applied Research 2019; 5(9): 48-50

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2019; 5(9): 48-50
www.allresearchjournal.com
Received: 28-07-2019
Accepted: 30-08-2019

डॉ. मनोज कुमार शुक्ला
सहायक प्राध्यापक इतिहास
शासकीय संस्कृत महाविद्यालय
रायपुर, छत्तीसगढ़, भारत

Correspondence
डॉ. मनोज कुमार शुक्ला
सहायक प्राध्यापक इतिहास
शासकीय संस्कृत महाविद्यालय
रायपुर, छत्तीसगढ़, भारत

मध्यकालीन इस्लामिक संस्कृति एवं धर्म दर्शन

डॉ. मनोज कुमार शुक्ला

सारांश
साहित्य, दर्शन, इतिहास, कला, विज्ञान आदि का अब्बासी युग में अद्वितीय विकास हुआ। यदि इसे निर्माण का युग कहा जाए तो कोई बड़ी बात नहीं होगी। अरबों ने फारस, यूनान, भारत आदि प्राचीन सभ्य देशों से बहुत कुछ सीखा और आवश्यकतानुसार उनमें परिवर्तन लाकर इस्लामी सभ्यता–संस्कृति को सुसज्जित किया। विज्ञान, कानून, धर्म–शास्त्र, दर्शन एवं साहित्य के क्षेत्रों में अरबों ने अपनी मौलिकता का भी यथेष्ट परिचय दिया। अब्बासीकालीन सांस्कृतिक प्रगति का प्रभाव यूरोप पर भी पड़ा और यूरोप के लोगों ने बहुत–सी बातें अरबों से सीखीं। प्रसिद्ध अब्बासी खलीफा मंसूर, हारून, मामून आदि ने सभ्यता–संस्कृति के क्षेत्र में व्यापक उन्नति लाने में विशिष्ट भूमिका निभाई। एक इतिहासकार के शब्दों में ''संस्कृति की बेल को खलीफा मंसूर ने सिंचित कर पल्लवित किया। वह बेल हारून के काल में एक वृक्ष के रूप में परिणित हुई जिसमें फल लगे और इस फल को खलीफा मामून के काल में लोगों ने चखा। तत्पश्चात समय की पतझड़ का शिकार होकर यह बेल मुरझा गयी।'' उपरोक्त आधार पर यह कहना प्रासंगिक है कि सांस्कृतिक विकास की दृष्टि से अब्बासी युग अत्यधिक उत्कृष्ट रहा।

कूटशब्दः मध्यकालीन इस्लामिक संस्कृति, धर्म दर्शन

प्रस्तावना
उमैयद शासनकाल में जो धार्मिक आन्दोलन हुआ, वह इस्लाम के प्रचार–प्रसार की दृष्टि से प्रेरित थे। वस्तुतः इस काल में भविष्य के आन्दोलनों की एक पृष्ठभूमि तैयार की गयी। इन आन्दोलनों ने एक ओर इस्लाम की जड़ को खोदने का भी प्रयास किया। इस प्रकार उमैयदकाल में मुताजिली, कादरी, खारीजी, शिया आदि आंदोलनों का प्रारम्भ हुआ, जो बाद में अब्बासी काल में पुष्पित एवं पल्लवित हुए। बसरा में त्रासिल इब्न–आता 748 ई. ने आठवीं सदी के पूर्वार्द्ध में एक बुद्धिवादी शाखा की स्थापना की जिसे मुताजिला कहा जाता है।, मुताजिली इस नाम से इस कारण से पुकारे जाते हैं कि उनका ऐसा विश्वास है कि जो व्यक्ति घातक पाप (कबरा) करता है, यद्यपि वह धर्म में आस्था रखने वाले लोगों की पंक्ति से हट जाता है, परन्तु उसे नास्तिक नहीं माना जा सकता है। वह दोनों के बीच का स्थान प्राप्त करता है। वासिल अल–बसरी का शिष्य था, जो स्वतन्त्र इच्छा के सिद्धान्त में विश्वास करता था, इस सिद्धान्त के ही परिणामस्वरूप मुताजिला संप्रदाय की स्थापना हुई। स्वतन्त्र इच्छा के इस सिद्धान्त को मानने वालों का एक दूसरा वर्ग भी था जिन्हें कादरी (कादर–शक्ति) कहा जाता था।
कादरी इस्लाम के कठोर पूर्व निर्यातवाद पर जरा सा भी विश्वास नहीं करता था। उनकी विचारधाराओं पर यूनानी तथा ईसाई विचारधाराओं का गहरा प्रभाव था। कादरी इस्लाम की पहली दार्शनिक शाखा थी और उनके विचार की व्यापकता का अनुमान इस बात से ही लगाया जा सकता है कि उमैयदों में से दो मुआविया द्वितीय तथा याजीद द्वितीय कादरी सम्पद्राय के अनुयायी थे। कादरी एवं खारजी क्रमशः इस्लाम की प्रथम दार्शनिक शाखा तथा धार्मिक राजनीतिक संप्रदाय था। खारजी संप्रदाय की उत्पत्ति हजरत अली के खलीफा काल में हुई थी। खारजी के नाम से वे लोग मशहूर हुए, जो शुरुआत में अली के कट्टर समर्थक थे परन्तु अली के द्वारा मुआविया के साथ समझौता करने के बाद अली के घोर विरोधी बन गये। वे इस सिद्धान्त के विरोधी थे कि कुरैश जाति के बीच से ही खलीफा का चुनाव हो। खारजी संप्रदाय के लोगों ने इस्लाम की स्थापना तथा इसकी सुरक्षा के लिए तीन सौ वर्षों तक भीषण नरसंहार किया। वे सन्त–फकीरों की पूजा के भी विरोधी थे। सूफी सिद्धान्तों में उनकी लेशमात्र भी आस्था नहीं थी। वर्तमान समय में भी इबाही के नाम से अल्जेरिया, ट्रोपोलिटानिया, उमान एवं जंजीबार में खारजी संप्रदाय के लोग निर्वासित हैं।

मुंजीरी : इस समुदाय का अभ्युदय भी उमैयदकाल में ही हुआ। मुंजीरी सम्प्रदाय इस्लाम के उदार विचारधाराओं का पोषक रहा है। अबू–हनीफा 767 ई. में इस सम्प्रदाय के महान सन्त हुए।

इस्लामी विधिशास्त्र की चार शाखाओं में से पहली शाखा की स्थापना हनीफा ने किया। इस्लाम का शिया तथा सुन्नी संप्रदाय में विभाजित होने का प्रमुख कारण खलीफा के चुनाव से होने वाला विवाद था। उमैयदकाल में शिया सम्प्रदाय के स्पष्ट स्वरूप का विकास हुआ। शिया अली और उनके उत्तराधिकारी के समर्थक बने रहे। इमाम में शियाओं को गहरी आस्था है और कट्टर शिया–तो इमाम को ईश्वर का अवतार भी मानते हैं। शिया सदा से सुन्नियों के कट्टर विरोधी रहे हैं। यह कहना मुश्किल प्रतीत होता है कि फारसी अथवा ईसाई विचारधाराओं का शिया समुदाय के जन्म तथा विकास में किस अंश में प्रभाव पड़ा है। भविष्य में अब्बासी काल में शियाओं का प्रभाव काफी बढ़ गया और इनके बीच अनेक सम्प्रदायों का जन्म हुआ। इन संप्रदायों ने भी इस्लामिक संस्कृति में विशिष्ट योगदान दिया।

धर्म–शास्त्र, आचार तथा विधिशास्त्र : अरब में धर्मशास्त्र, आचारशास्त्र तथा विधिशास्त्र जगत में उस समय बहुत अधिक विकास हुआ और इन विषयों में विद्वानों द्वारा अनेक प्रामाणिक ग्रन्थों की रचना की गयी। यद्यपि ज्योतिष, गणित, रसायन आदि विषयों में सीरियाई, यहूदी तथा फारसियों ने अधिक प्रगति की थी लेकिन धर्मशास्त्र, विधि, दर्शन आदि के क्षेत्रों में अरबों का प्रभाव अधिक था। कुरान तथा परम्परा को आधार बनाकर धर्मशास्त्र एवं आचारशास्त्र का प्रणयन किया गया। मुहम्मद साहब के हदीस पर कई प्रसिद्ध विद्वानों ने महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों की रचना की। 'सहीह' की रचना के द्वारा अरब के विद्वानों ने हदीस की उपयोगिता में और वृद्धि कर दी। सुन्त के छः ग्रन्थों के आधार पर श्अल–कुतुब–अल सित्ताश नामक पुस्तक लिखी गयी। अध्यात्मवाद पर गजाली ने उत्कृष्ट ग्रन्थ लिखे। धार्मिक साहित्य के विकास में इमाम मलिक की रचना अत्यधिक उपयोगी साबित हुई। सूफी साहित्य के क्षेत्र में 'कुत–उल–कूलुब', 'तबका–उल–सूफिया' आदि विशिष्ट ग्रन्थ थे।

आचारशास्त्र : अब्बास शासन के दौरान धर्म एवं आचारशास्त्र पर भी अनेक ग्रंथ लिखे गये इसी वजह से इसे आचार शासन के युग से जाना जाता है। इस्लामीक विधिशास्त्र के अनेक प्रामाणिक ग्रन्थों का सृजन भी किया गया जिसमें नैतिक आचरण, सद्भावना, शिष्टाचार आदि पर भी प्रकाश डाला गया। इस काल के आचारशास्त्र के पंडितों में लुकमान मुकफ्फा तथा मलिक–इन–अनास आदि का नाम बड़े ही श्रद्धा के साथ लिया जाता है। मिस्कवा की रचना 'तहजीब अल–अखलाक' 'इल्म अल–अखलाक' की रचना ईशाक ने किया। इन रचनाओं को आचारशास्त्र पर लिखी गयी विशिष्ट कृति कहा जाता है।

विधिशास्त्र : विधिशास्त्र पर महत्वपूर्ण रचना करके न्याय प्रशासन में स्वतंत्रता पर जोर अरब शासकों ने दिया। यद्यपि इस्लामीक विधिशास्त्र कुरान तथा हदीस पर ही आधारित थे, किन्तु इस दिशा में अरबों ने विदेशियों से भी बहुत कुछ सीखा था। यूनानी तथा रोमनों का अरबों के ऊपर अत्यधिक प्रभाव पड़ा था। अब्बासी काल में कुरान तथा परम्परा के अतिरिक्त 'किया' एवं 'इजमा' भी इस्लामी विधि के दो महत्त्वपूर्ण आधार बन गये। इस तरह से न्याय में इराकी शाखा का भी प्रभाव हो गया। इराकी शाखा में न्यायिक चिन्तन पर काफी बल दिया जाता था, जबकि मदीना शाखा पूर्ण रूप से कुरान एवं हदीस पर आधारित थी। इराकी शाखा का प्रणेता अबू–हनीफा अथवा अल–नूमान इन–थाबीत था। किताब अल–खराज की रचना अबू–युसुफ द्वारा की गयी, जिसमें उसने अपने गुरु के विचार व्यक्ति किये। यद्यपि अबू–हनीफा का उद्देश्य किसी नयी विधि शाखा की स्थापना करना नहीं था, लेकिन कालान्तर में उसके विचारों ने एक नवीन शाखा का रूप लिया, जो इस्लामी विधि का सर्वाधिक उदार शाखा माना जाता है। आज इस विधि शाखा को अधिकांश सुन्नी मुसलमान स्वीकार करते हैं।

ओटोमन साम्राज्य, भारत तथा मध्य एशिया के देशों में इसे ही राजकीय स्थान मिला हुआ था। मदीना शाखा विद्वानों में मलीक इन–अनास (715–795 ई.) की रचना 'अल–मुक्ता' को अत्यधिक महत्व दिया जाता है। अब्बासी काल में ही मुहम्मद इन–इद्रीस. अल–शाफी (767–820 ई.) ने इस्लामी विधि की शिया शाखा की स्थापना की। इस शाखा को आज भी लोअर मिस्र, पूर्वी अफ्रीका, फिलस्तीन, पश्चिमी एवं दक्षिणी अरब, भारत के तटीय क्षेत्र तथा ईस्ट इण्डीज के देशों में मान्यता प्राप्त है। इस्लाम की अन्तिम एवं चौथी विधि शाखा–हनबलाशाखा जिसका विकास भी अब्बासी काल में ही हुआ। इसका प्रणेता अल–शूफी का ही एक शिष्य अहमद इन–हनबल था। इस्लामी जगत में यह शाखा बहुत प्रसिद्ध है।

दर्शनशास्त्र : यूनानी दर्शन के आधार पर अब्बासी दर्शनशास्त्र का विकास हुआ किन्तु इस पर भारत जैसे पूर्वी देशों के दर्शन का भी गहरा प्रभाव पड़ा है। अरबों ने अपनी धार्मिक तथा मानसिक रुचि के अनुसार नवीन बदलाव किये तथा अरबी के माध्यम से अपने विचारों को व्यक्त किया। यूनानी दार्शनिक अरस्तू की रचनाओं से अरब व्यापक रूप से प्रभावित हुए। उन्होंने यूनानी शब्द 'फिलासफी' को 'फलसफा' अथवा 'हुकमा' के रूप में स्वीकार किया। अरबों ने अपनी फलसफा में धर्म को सबसे अधिक महत्त्व दिया। अरबों का ऐसा विश्वास था कि फलसफा वह विज्ञान है, जो किसी वस्तु के वास्तविक कारणों पर प्रकाश डालता है। अल–किन्दी, अल–फराबी और इन–सीना का नाम अब्बासी युग के अरब दार्शनिकों में आदर के साथ लिया जाता है।

अल–किन्दी : अल–किन्दी अरबी दार्शनिक था जिसका घर बगदाद था। वह शुद्ध अरबी वंश का था, अतः लोग उसे 'अरबों का दार्शनिक' की संज्ञा से विभूषित करते हैं। उसने अरस्तू को अपना आदर्श माना है। अपने दर्शन में अल–किन्दी ने अरस्तू तथा प्लेटो के दर्शन में समायोजित करने का अथक प्रयत्न किया है। दार्शनिक के अतिरिक्त अल–किन्दी एक लब्धप्रतिष्ठ ज्योतिषाचार्य, रसायनशास्त्री, संगीताचार्य एवं नेत्र–चिकित्सक भी था। इन विषयों पर उसने लगभग 264 पुस्तकें लिखी हैं परन्तु आज उनमें से अधिकांश नष्ट हो चुकी हैं। नेत्र चिकित्सा पर अल–किन्दी ने यूक्लीड की रचना के आधार पर एक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ की रचना की थी।

पूर्वी तथा पश्चिमी देशों में इसका व्यापक प्रचलन था। लैटिन भाषा में 'डी आस्पेक्टिवस' के नाम से इसका अनुवाद किया गया। रोजर बैकन भी इससे अत्यन्त प्रभावित हुआ था। आल–किन्दी ने संगीत–शास्त्र पर भी तीन–चार प्रामाणिक पुस्तकों की रचना की। इन पर भी यूनानी प्रभाव स्पष्ट रूप से परिलक्षित होते हैं। फसल फुल–अरबी और फरावी किन्दी की सर्वश्रेष्ठ रचनाएँ माना जाती हैं। वर्तमान रचनाओं में अधिकतर अरबी भाषा का प्रयोग होता है।

अल–फराबी : अल–फराबी और इन–सीना का अल–कन्दी के यूनानी एवं अरबी दर्शन को पूर्णता दिलाने में विशिष्ट योगदान था। फराबी का जन्म ट्रांसऑक्सियाना में हुआ था। उसने बगदाद में एक ईसाई शिक्षक के अधीन अपनी शिक्षा–दीक्षा पूरी की। अलेप्पो के प्रसिद्ध सयीफ–अल–दौला–अल–हमदानी के दरबार में एक सूफी सन्त एवं दार्शनिक के रूप में फराबी ने ख्याति प्राप्त की। अस्सी वर्ष की उम्र में (950 ई.) फराबी की मृत्यु दमिश्क में हुई। अपने दर्शन में उसने अरस्तू, प्लेटो तथा सूफीवाद के दार्शनिक सिद्धान्तों के बीच सामंजस्य स्थापित करने का प्रयास किया। लोग उसके विचारों से काफी प्रभावित थे और उनमें 'रिसालत फुसुम अलहिकामी', 'रिसालत फी अरा अहल–अल

मदीना अल–फदीला', 'अल–सीयासाह' 'अल–गदीना–याह' आदि विशेष रूप में उल्लेखनीय माने जाते हैं। फराबी की अन्य कृतियों से यह स्पष्ट हो जाता है कि वह गणित, संगीत, चिकित्साशास्त्र आदि विषयों में निपुण था। फराबी ऐसा संगीतकार था, जो लोगों को बहुत जल्दी प्रभावित कर देता था। उसने विद्या पर तीन ग्रन्थों की रचना की जिनमें 'किताब अल–मुशीको अल–कबीर' सर्वाधिक शुद्ध होने के साथ–साथ सर्वाधिक उपयोगी भी है।

इब्न–सीना : इब्न–सीना स्वयं को अल–फराबी का ऋणी समझता था। उसने किन्दी द्वारा प्रारम्भ किये गये यूनानी एवं अरबी दर्शन के समन्वय कार्य को पूर्णता प्रदान की तथा इस्लामी दर्शन को और भी परिष्कृत किया। सीना में अरबी ने संगीत–शास्त्र के एक प्रामाणिक ग्रन्थ का सृजन भी किया। इब्न–खालीकान ने एक दार्शनिक एवं संगीतकार के रूप में सीना को सबसे महान बताया है और उसकी बहुत तारीफ की हैं। उसकी रचनाएं उत्कृष्ट थीं। इस्लामी साहित्य के विकास में उपरोक्त विद्वानों के अलावा भी बहुत से लोगों एवं संगठनों ने योगदान दिया है। बसरा में दसवीं सदी के उत्तरार्द्ध में 'इखवान–अल–सफा' नामक संस्था की स्थापना की गयी जिसके सदस्य दर्शन एवं धर्म का चिन्तन, विमोचन एवं प्रचार किया करते थे। इस संस्था की एक शाखा बगदाद में भी स्थापित थी। बगदाद की साखा ने 'इस्लामाइट' सिद्धान्तों पर अधिक बल दिया। अल–गजाली, अब–अल–अला–मारी, अबू दय्यान अल–तौहीदी जैसे कवियों, विद्वानों तथा दार्शनिकों ने भी इस्लामी दर्शनशास्त्र को गति प्रदान की।

निष्कर्ष

अतः कहा जा सकता है कि इस काल का एक अन्य महान् दार्शनिक यहूदी जाति का इमरान भूसा इन–मामून था। वह धर्म–शास्त्र का भी जानकार था। 'अत–फुसुल फी अल–तिब्ब' तथा दर्शनशास्त्र पर 'दलालात अल–हाइरीन' उसकी रचनाओं का लैटिन तथा हिब्र भाषाओं में अनुवाद किया। इस काल में अरबी रहस्यवादी संत विद्वानों में अबू–बकर मुहम्मद इब्न–अली, मुहयी अल दीन इन अरबी, अल शेख अल अकबर अबू–मुहम्मद, अब्दुल–हम–इन–साबीन, अब्दुल वाहीद अल–रशीद आदि उल्लेखनीय हैं। इन्हें धर्म की अच्छी जानकारी थी। इन्होंने धर्म के विस्तार एवं प्रचार–प्रसार में अनेक कार्य किये थे।

संदर्भ

1. मध्यकालीन संस्कृति एवं समाज, डॉ. एच.एस. पाण्डेय, मोतीलाल बनारसी दास, 1972।
2. इस्लामिक साहित्य एवं संस्कृति, रायल सोसायटी, कोलकाता, 1872।
3. मध्यकालीन भारत, वि.के. गर्ग, थियोसोफीकल सोसायटी, लन्दन, 1821।
4. मध्यकाल एवं यूरोप– डि.के. शास्त्री, रायल सोसायटी, कोलकाता, 1884।
5. इस्लामिक समाज, भास्वती, महात्मा गाँधी, काशी विद्यापीठ, वाराणसी, 1984।
6. इस्लामिक इतिहास, लोकभारती प्रकाशन, प्रयाग।
7. इस्लामिक संस्कृति, उद्भव और विकास, डॉ. एम. मुस्तफा, संस्कृति प्रकाशन, इलाहाबाद, 1972।